मुखपृष्ठ
साहित्यकारों की वेबपत्रिका
साहित्यसुधा
वर्ष: 5, अंक 95,अक्तूबर(द्वितीय), 2020

पोस्टऑफिस

लेखक: स्वर्गीय धूमकेतु
अनुवादक: रजनीकान्त एस.शाह

पिछली रात का भूरा आकाश, मानवजीवन में अनेक सुखद स्मृतियाँ चमक उठती हैं वैसे ही छोटे-बड़े तारों से चमक रहा था। सर्द हवाओं की सरसराहट से बचने के लिए अपने पुराने और फटे हुए कुर्ते को शरीर पर ज्यादा से ज्यादा लपेटते हुए एक बुढ़ऊ शहर के मध्य भाग से गुजरता हुआ जा रहा था। स्वाधीनवस्था भोग रहे कईं घरों से इस समय चक्की की मधुर सी लगनेवाली आवाज,स्त्रियों की झीनी आवाज के साथ आ रही थी। एकाध कुत्ते के भौंकने की आवाज,किसी जल्दी जग जानेवाले की पदचाप का दूर से सुनायी देनेवाला शब्द या किसी असमय जगे हुए पक्षी का स्वर: इनके अतिरिक्त शहर एकदम शांत था। लोग मीठी निद्रा के वश थे, और जाडे की ठंड से रात और गहरी होती जा रही थी। कहे नहीं फिर भी कत्ल कर दे ऐसे मीठे मनुष्य के स्वभाव सी जाडों की सर्दी कातिल हथियार की भांति सर्वत्र अपना काबू फैला रही थी। बुढ़ऊ ठिठुरता-कांपता हुआ शांति से डगमगाता हुआ चलकर शहर के दरवाजे के बाहर होकर,एक सीधी सड़क पर जा पहुंचा,और धीरे से अपनी पुरानी लाठी के सहारे आगे बढ़ा।

सड़क के एक तरफ पेड़ों की पांत थी, और दूसरी ओर शहर का बगीचा था। यहाँ ठंड का प्रभाव ज्यादा था। और रात्री और साँवली होती जा रही थी। पवन आरपार निकल जाता था और शुक्र तारे का मीठा तेज,बर्फ बरसे ऐसे पृथ्वीतल पर ठंड के टुकड़े सा बरस रहा था। जहाँ बगीचे का छोर था वहाँ अत्याधुनिक एक रौनकदार मकान था,और उसकी बंद खिड़की तथा किंवाड़ से दीये का उजास बाहर आ रहा था।

भाविक मनुष्य दातार का शिखर देखकर जिस प्रकार श्रद्धा से आनंद का अनुभव करे ,ऐसे ही बुढ़ऊ इस मकान की काष्ट की कमान देखकर आनंदित हुआ। कमान पर एक बहुत पुरानी पट्टी पर नए अक्षरों में लिखा था:`पोस्टओफिस।'

बुढ़ऊ ऑफिस के बाहर दालान में बैठा। अंदर से कोई चौकस आवाज नहीं आ रही थी,पर दो-चार लोग काम में व्यस्त हों ऐसी व्यावहारिक `फुसफुसाहट' हो रही थी।

`पुलिस सुपरिन्टेन्डन्ट!' अंदर से आवाज आई। बुढ़ऊ चौंका। पर शांत होकर बैठा। श्रद्धा और स्नेह इतनी सर्दी में भी उसे उष्मित कर रहे थे।

अंदर से आवाज पर आवाज आने लगी। कारकुन अंग्रेज़ी चिट्ठी पर लिखे हुए पते बोलते हुए डाकिये की तरफ फेंकता जा रहा था। कमिश्नर,सुपरिन्टेन्डन्ट,दीवानसाहब,लायब्रेरियन आदि। इस प्रकार एक के बाद एक ऐसे अनेक नाम बोलने का अभ्यासी कारकुन फटाफट खत बाँटता जा रहा था।

ऐसे में अंदर से एक मज़ाकिया आवाज आयी:`कोचमेन अली डोसा!'

बुढ़ऊ जहाँ बैठा हुआ था वहाँ से खड़ा हुआ, श्रद्धा के भाव के साथ आकाश की ओर देखकर आगे बढ़ा और दरवाजे पर हाथ रखा।

'गोकलभाई!'

`कौन?

`कोचमेन अली डोसा का चिट्ठी (खत) बोले न?...मैं आया हूँ?'

जवाब में निष्ठुर हास्य आया।

`साहब! यह तो पागल बूढ़ा है। वह हमेशा अपनी चिट्ठी लेने के लिए पोस्टऑफिस में चक्कर काटता रहता है।'

कारकुन ने ये शब्द पोस्टमास्टर को कहते ही बुढ़ऊ तो अपनी जगह पर बैठ गया था। पाँच वर्ष हुए उसे उस जगह पर बैठने का अभ्यास था।

अली मूलत: तो घाघ शिकारी था। बाद में धीरे धीरे वह अभ्यास में ऐसा तो कुशल हो गया था कि हमेशा अफीमची को अफीम लेना पड़े,उसी प्रकार अली को भी शिकार करना पड़े। धूल के साथ धूल जैसे बन जानेवाले चितकबरे तेतर पर अली की दृष्टि पड़ते ही उसके हाथ में तेतर आ ही गया होता है! उसकी तीक्ष्ण दृष्टि खरगोश की खोह में भी जा पहुँचती थी। आसपास के सूखे,पीले `कागड़े'(वनस्पति विशेष) के या रांपड़ा(निकम्मी घाँस) में छिपकर कान सीधे करके बैठे हुए चतुर खरगोश के भूरे मैले रंग को कभी कभी खुद शिकारी कुत्ते भी अलग नहीं कर पाने के कारण आगे बढ़ जाते थे और खरगोश बच जाता था,परंतु इटली के गरुड सी अली की दृष्टि

ठीक खरगोश के कान पर जाते ही दूसरे ही पल वह रहता नहीं था उपरांत कभी कभी अली मछलीमार का मित्र भी बन जाता था।

पर जब जीवनसंध्या के उदय का अहसास किया तब यह शिकारी अचानक अन्य दिशा में मुड गया। उसकी इकलौती पुत्री मरियम शादी कर के ससुराल गई। उसके दामाद को फौज में नौकरी थी, इसलिए वह उसके साथ पंजाब की ओर गई थी; और जिसके लिए वह जी रहा था उस मरियम के विगत पाँच वर्ष हुए कोई समाचार नहीं थे। अब अली की समझ में आया कि स्नेह और विरह क्या है? पहले तो वह तेतर के शावकों को आकुल-व्याकुल होकर दौड़ते हुए देखकर हँसता था। यह उसका-शिकार का आनंद था।

शिकार के प्रति उसकी रुचि समूल समाप्त हो गई थी;परंतु जिस दिन मरियम गई और उसने जीवन में एकलता का अहसास अनुभव किया,उसी दिन से अली शिकार पर जाता तब शिकार को भूलकर स्थिर दृष्टि से धान्य के भरसक हरेभरे खेतों को देखता रहता! उसे जिंदगी में पहलीबार समझ में आया कि कुदरत में स्नेह की सृष्टि और विरह के आंसु हैं! उसके बाद तो एक दिन अली पलाश के पेड़ के नीचे बैठकर फुट-फुटकर रोया। उसके बाद नित्यप्रति वह सुबह चार बजे उठकर पोस्टऑफिस आता। उसका खत तो कभी आए ही नहीं,पर मरियम का खत एक दिन आएगा ही ऐसी भक्त के जैसी श्रद्धा के साथ और आशापूरित उल्लास में वह सबसे पहले पोस्टओफिस जाकर बैठ जाता था।

पोस्टऑफिस कदाचित जगत में सबसे शुष्क मकान-उसका धर्मक्षेत्र-तीर्थस्थान बना। एक ही जगह पाए और एक ही कोने में वह हमेशा बैठता था। उसको ऐसा जानने के पश्चात् सब उस पर हँसते थे। पोस्टमेन कभी मज़ाक उडाते थे और मज़ाक में ही उसका नाम पुकारकर,उसे उस जगह पर से पोस्टऑफिस के दरवाजे तक, खत नहीं होते हुए भी धक्का खिलाते थे। अकूत श्रद्धा और धैर्य हो ऐसे वह हमेशा आता और हररोज खाली हाथ वापस लौटता था।

अली बैठा हुआ था उतने में एक के बाद एक चपरासी अपने अपने ऑफिस के पत्र लेने के लिए आने लगे। महदांश चपरासी तो बीसवीं शताब्दी में अधिकारियों की पत्नियों के निजी सचिव जैसे हैं; अत: सारे शहर के प्रत्येक ऑफिसर का ख़ानगी इतिहास अभी पढ़ा जाता था।

किसी के माथे का साफा,तो किसी के पैर के चमचम करते जूते- इस प्रकार सब अपना अपना विशिष्ट भाव व्यक्त करते थे। इतने में किंवाड़ खुला,दीये के उजाले में सामनेवाली कुर्सी पर तुम्बे जैसा माथा और नित्यप्रति की दिलगिरी से युक्त उदासीन सा चेहरा लिए पोस्टमास्टर बैठे हुए थे। कपार पर,मुंह पर या आँख में कहीं पर भी तेज नहीं हो तब मनुष्य ज्यादातर गोल्डस्मिथ का `विलेज स्कूल मास्टर,' इस सदी का कारकुन या पोस्टमास्टर होता है!

अली अपनी जगह से हटा नहीं।

`पुलिस कमिश्नर!' कारकुन ने आवाज दी और एक उत्साहित जवान ने पुलिस कमिश्नर की डाक लेने के लिए हाथ बढ़ाया।

` सुपरिन्टेन्डन्ट!'

दूसरा चपरासी आगे बढ़ा- इस प्रकार उस विष्णुनाम सहस्त्रावली विष्णुभक्त की भांति कारकुन हमेशा पढ़ता रहता था।

अंत में सब चले गए। अली उठा। पोस्टऑफिस में चमत्कार हो ऐसे उसे प्रणाम करके चल दिया! अरे सदियों पुराना वह गँवई!

``यह आदमी पागल है?" पोस्टमास्टर ने पूछा।

`हाँ कौन? अली न? हाँ साहब; पाँच वर्ष हुए हैं,चाहे कैसा भी मौसम हो पर वह खत लेने के लिए आता है! उसका खत शायद ही आता है!' कारकुन ने जवाब दिया।

`कौन खाली बैठा है? रोज तो कहाँ से डाक होगी?'

`अरे,साहब, पर वह तो पगला गया है! पहले तो वह बहुत पाप करता था; उस पर उसने किसी स्थानक में चूक की! भाई किए हुए कर्म तो यहीं भुगतने हैं!' पोस्टमेन ने समर्थन किया।

`पागल लोग बड़े विचित्र होते हैं।'

`हाँ,अहमदाबाद में एकबार मैंने एक पागल को देखा था। दिनभर वह धूल के ढेर ही लगाता रहता था: बस और कुछ नहीं। एक और पागल की आदत हररोज शाम को नदी किनारे जाकर एक पत्थर पर पानी डालने की थी!'

`अरे एक पागल की तो ऐसी आदत थी कि वह सारा दिन आगे पीछे चलता ही रहता था! दूसरा एक कविता गाता रहता था। एक तो अपने गाल पर चांटे ही मारता रहता था,फिर कोई मार रहा है ऐसा मानकर रोता रहता था।'

आज पोस्टऑफिस में पागल पुराण चला था। हमेशा ऐसा एकाध प्रकरण छेडकर उस पर दो-चार मिनट बात करके आराम कर लेने की आदत लगभग सभी नौकरीसुदाओं में शराब की लत की तरह पैठ गई है। पोस्टमास्टर ने उठकर जाते जाते कहा:

`भला,पागलों की भी दुनिया है ऐसा लगता है! पागल हमें पागल समझते होंगे और शायद पागलों की सृष्टि कवियों की सृष्टि जैसी ही होगी!'

अंतिम शब्द बोलते हुए पोस्टमास्टर हँसते हुए चले गए। एक कारकुन वक्त मिलते ही पागलपंतीनुमा कुछ जोड़ देता था। और सब उसे चिढ़ाते थे। पोस्टमास्टर ने अंतिम वाक्य इसीलिए हँसते हँसते उसकी ओर मुड़कर कहा था। पोस्टऑफिस यथावत शांत होता रहा।

एकबार अली दो-तीन दिन तक आया नहीं। पोस्टऑफिस में अली के मन को समझ सके ऐसी सहानुभूति या उदार दृष्टि किसी में नहीं थी,पर `वह क्यों नहीं आया' ऐसी कौतुकबुद्धि

सबने अनुभव की। उसके बाद अली आया पर उस दिन वह हांफ रहा था,और उसके चेहरे पर जीवनसंध्या के स्पष्ट चिह्न थे।

आज तो अली ने अधीरता से पोस्टमास्टर से पूछा:`मास्टरसाहब मेरी मरियम का पत्र है?'

पोस्टमास्टर उस दिन कहीं जाने की जल्दी में थे। उनका दिमाग इस प्रश्न को झेल सके उतना शांत-स्वस्थ नहीं था।

`भाई आप कैसे हो?'

`मेरा नाम अली!' अली की ओर से असम्बद्ध जवाब मिला।

`हाँ, पर क्या यहाँ आपकी मरियम का नाम लिख रखा है?'

`लिखकर रख लीजिये न भाई! हो सकता है खत आए,और यदि मैं नहीं होऊँ तो आपके काम आए।' पौनी जिंदगी जिसने शिकार में बितायी हो उसे क्या पता कि मरियम का नाम उसके पिता को छोडकर अन्य के लिए दो कौड़ी बराबर के मूल्य का है।

पोस्टमास्टर गुस्सा हो गए: `पागल है क्या? जा,जा तुम्हारा खत आएगा तो कोई खा नहीं जायेगा!'

पोस्टमास्टर जल्दी में चले गए और अली धीरे धीरे चलकर बाहर निकला। निकलते निकलते फिर एकबार मुड़कर पोस्टऑफिस की ओर देख लिया! आज उसकी आँखों में अनाथ की श्रद्धा के आंसु की छलक थी; अश्रद्धा नहीं थी पर धैर्य नहीं बचा था! अरे! अब मरियम का पत्र कैसे पहुंचेगा?

एक कारकुन उसके पीछे आता हुआ लगा। अली ने उसकी ओर मुड़कर : `भाई!'

कारकुन चौंका; पर वह अच्छा आदमी था।

`क्यों?'

`देखो, यह मेरे पास है।' ऐसा कहकर अपनी धातु की एक पुरानी डिबिया थी उसमें से अली ने पाँच गिनियाँ निकाली। यह देखकर कारकुन चौंक गया।

`चौंकिए मत, आपके लिए यह काम की चीज है। मेरे अब किसी काम की नहीं पर एक काम करेंगे?'

`क्या?'

`यह ऊपर क्या दिखता है?' अली ने शून्य आकाश की ओर उंगली से संकेत किया।

`आकाश।'

`ऊपर अल्लाह हैं। उनकी साक्षी में आपको पैसे देता हूँ। मेरी मरियम का पत्र आए तब आप मेरे पास पहुंचा देना।'

कारकुन आश्चर्यवश स्थिर होकर खड़ा रहा: `कहाँ से कहाँ पहुंचाना है?'

`मेरी कब्र पर!'

`क्या?'

`सच कह रहा हूँ, आज अब आखिरी दिन है! अरेरे आखिरी! मरियम नहीं मिली,पत्र भी नहीं मिला।' अली की आँखों में सुस्ती थी। कारकुन धीरे धीरे उससे अलग होकर चला गया। उसकी जेब में तीन तोला सोना पड़ा था।

**

उसके बाद अली कभी नजर नहीं आया। और उसका पता लगाने की किसीको कोई चिंता तो थी ही नहीं। एक दिन पोस्टमास्टर कुछ गमगीन थे। उनकी बेटी सुदूर परदेश में बीमार थी,और उसकी खबर का इंतजार करते हुए शोकार्त्त बैठे थे।

डाक आई और चिट्ठी का थोक उठाया। रंग पर से अपना कवर है ऐसा मानकर पोस्ट-मास्टर ने त्वरा से एक कवर उठा लिया। पर उस पर पता लिखा हुआ था।`कोचमेन अली डोसा!'

बिजली का झटका लगा हो ऐसे उन्होंने उसे नीचे फेंक दिया! दिलगिरी और चिंता के कारण थोड़े ही क्षणों में उनके अधिकारी के सख्त स्वभाव की जगह मानव स्वभाव बाहर आया था। उन्हें एकदम याद आया कि यह उसी बुढ़ऊ का कवर-और शायद उसकी बेटी मरियम का।

`लक्ष्मीदास!' उसने आवाज दी।

लक्ष्मीदास वही व्यक्ति था जिसे अली ने अंतिम क्षणों में पैसे दिये थे।

`क्यों साहब?'

`यह आपके कोचमेन अली डोसा.....आज अभी कहाँ हैं?'

`तलाश करता हूँ।'

उस दिन पोस्टमास्टर के लिए कोई खबर नहीं आई। सारी रात शंका में बिताई। दूसरे दिन सुबह तीन बजते ही वे ऑफिस में बैठ गए थे। कब चार बजे और मैं अली डोसा आए और मैं अपने हाथों ही उसे कवर दूँ,आज उनकी ऐसी इच्छा थी।

बुढ़ऊ की स्थिति को अब पोस्टमास्टर समझ चुके थे। आज सारी रात उन्होंने आनेवाले खत के ध्यान में बिताई थी। पाँचपाँच वर्ष तक ऐसी अखंड रातें बितानेवाले के प्रति उनका हृदय आज पहलीबार संवेदनावश होकर उछल रहा था। ठीक पाँच बजे दरवाजे पर दस्तक हुई पोस्टमेन अभी आए नहीं थे; पर यह दस्तक अली की थी,ऐसा लगा। पोस्टमास्टर उठे। पिता का हृदय पिता के हृदय को पहचाने ऐसे आज वे दौड़े,दरवाजा खोला।

`आइए अलीभाई! यह आपका खत!' दरवाजे पर एक वृद्ध दीन बुढ़ऊ छड़ी के सहारे झुका हुआ खड़ा था। आखिरी आँसु की धार अभी उसके गाल पर ताजा थी,और चेहरे की झुर्री में अकड़ के रंग पर भलमनसी की कुंजी चली हुई थी।

उसने पोस्टमास्टर की ओर देखा। और पोस्टमास्टर तनिक चौंके। बुढ़ऊ की आँख में मनुष्य का तेज नहीं था!

`कौन साहब? अली डोसा....!' लक्ष्मीदास ने एक तरफ सरककर कहते हुए दरवाजे के पास गया।

पर पोस्टमास्टर ने उसकी ओर लक्ष्य नहीं किया और वे दरवाजे की ओर ही देखते रहे-पर वहाँ कोई दिखाई नहीं दिया। पोस्टमास्टर की आँखें फट गई! दरवाजे पर अब कोई था ही नहीं, यह क्या? वे लक्ष्मीदास की ओर मुड़े।

उसके सवाल का जवाब दिया:

`हाँ अली डोसा कौन? आप हैं ना?'

`जी, अली डोसा तो अब नहीं रहे! पर उसका खत लाइए मुझे दीजिये!'

क्या? कब? लक्ष्मीदास!'

`जी उसके गुजरे तो करीब तीन महीने हो गए हैं!' सामने से एक पोस्टमेन आ रहा था उसने शेष आधा जवाब दिया था।

पोस्टमास्टर दिग्मूढ हो गए। अभी मरियम का खत वहाँ दरवाजे पर पड़ा हुआ था! अली की मूर्ति उनकी नजर के सामने छायी रही। लक्ष्मीदास ने अली आखिर में कब मिला था, यह भी बताया। पोस्टमास्टर के कान में वह दस्तक और नजर के समक्ष अली की मूर्ति दोनों खड़े हुए! उनका मन भ्रमित हुआ: मैंने अली को देखा, या वह मात्र शंका थी, या फिर वह लक्ष्मीदास था?-

**

पुन: रोज़मर्रा का ढर्रा चला: `पुलिस कमिश्नर,सुपरिंटैंडन्ट,लायब्रेरियन-' कारकुन त्वरा से डाक फेंकता जा रहा था।

पर आज हरएक खत में धड़कता हुआ दिल हो ऐसे पोस्टमास्टर टकटकी बांधे देख रहे हैं! कवर अर्थात् एक अन्नी और पोस्टकार्ड अर्थात् दो पैसे-वह दृष्टि अब चली गई है। सुदूर अफ्रिका से,किसी विधवा के इकलौते बेटे का खत अर्थात् क्या? पोस्टमास्टर ज्यादा से ज्यादा गहरे उतरते हैं।

मनुष्य अपनी दृष्टि छोडकर अन्य की दृष्टि से देखे तो आधा जगत शांत हो जाए।

**

उस शाम लक्ष्मीदास और पोस्टमास्टर धीमी चाल से अली की कब्र की ओर बढ़ रहे थे। मरियम का खत साथ में ही था। कब्र पर खत रखकर पोस्टमास्टर और लक्ष्मीदास वापस लौटे।

`लक्ष्मीदास! आज सुबह आप ही सबसे पहले आए थे ना?'

`जी हाँ।'

`-और आप बोले, अली डोसा....'

`जी हाँ।'

`पर-तब....तब ,समझ में नहीं आया या...'

`क्या?'

`हाँ ठीक है। कोई बात नहीं!' पोस्टमास्टर ने फटाफट बात को खत्म किया। पोस्टऑफिस का आँगन आते ही पोस्टमास्टर लक्ष्मीदास से अलग होकर कुछ सोचते हुए भीतर चले गए। अली को नहीं समझ सकने के कारण उनके पितृहृदय को यह दंश खटक रहा था और आज अभी भी अपनी बेटी की कोई खबर नहीं थी, अत: समाचार की चिंता में पुन: वे रात्री बितानेवाले थे। आश्चर्य,शंका और पश्चाताप के त्रिविध ताप से जल रहे वे अपनी बैठक में बैठे और पास में रही कोयले की अँगीठी से मीठी आंच आने लगी।

कृपया रचनाकार को मेल भेज कर अपने विचारों से अवगत करायें